Translation of The Mathematics of India by P.P. Divakaran Reviewed by M. S. Narasimhan_From Azim premji University At Right Angles_March, 2020

द मैथेमेटिक्स ऑफ़ इंडिया - पी.पी.दिवाकरन

समीक्षक - एम.एस.नरसिम्हन

(मूल रूप से *करंट साइंस* वॉल्यूम 117, pp. 309-311, 2019 में प्रकाशित। करंट साइंस एसोसिएशन की अनुमति से पुन:प्रकाशित।)

हालाँकि यह सर्वविदित है कि भारत में गणित की एक लम्बी और समृद्ध परम्परा रही है, लेकिन पुस्तकों द्वारा ऐसी जानकारियाँ मिलना कठिन है जो गणित के क्षेत्र में भारत के विशिष्ट योगदान को विस्तार से बताती हैं, गणितीय विचारों के विकास और निरन्तरता का पता लगाती हैं और उस ऐतिहासिक और सामाजिक पृष्ठभूमि का सर्वेक्षण करती हैं, जिसमें गणित का यह अनुसन्धान किया गया था। दिवाकरन की यह उत्कृष्ट पुस्तक, जो पठनीय, विद्वतापूर्ण और अच्छी तरह से शोधित है, इस आवश्यकता को पूरा करती है।

गणितज्ञों की अन्तर्राष्ट्रीय कांग्रेस (1978) में दिए गए अपने व्याख्यान 'गणित का इतिहास : क्यों और कैसे?' में आंद्रे वेइल, गणित के इतिहास पर किसी काम के उद्देश्य और विषयवस्तु पर चर्चा करते हुए कहते हैं : 'पहला उद्देश्य है अव्वल दर्जे के गणित के उदाहरणों को हमारे सामने रखना और इसमें शामिल गणितीय विचारों और उनके अन्तर्सम्बन्धों पर प्रकाश डालना। इसके अलावा जीवित गणितज्ञों के लेखन के साथ-साथ उनके परिवेश को सामने लाने वाला एक जीवनी रेखाचित्र भी वांछनीय होगा।' वेइल कहते हैं कि 'स्रोतों की भाषा का पर्याप्त ज्ञान होना एक अनिवार्य आवश्यकता है; सभी ऐतिहासिक अनुसन्धानों का एक बुनियादी और ठोस सिद्धान्त यह है कि यदि मूल टेक्सट उपलब्ध हो तो कोई भी अनुवाद मूल की जगह कभी नहीं ले सकता है।' आधुनिक गणितीय संकेत, अवधारणाओं और भाषा का उपयोग करके परिणामों और विधियों की व्याख्या करना महत्त्वपूर्ण है। वेइल का यह भी कहना है कि न केवल अतीत के महान गणितज्ञों के काम पर ध्यान केन्द्रित करने के प्रलोभन को छोड़ना आवश्यक है, बल्कि कमतर गणितज्ञों के काम की उपेक्षा करना भी आवश्यक है। समीक्षाधीन पुस्तक इन आवश्यकताओं को पूरा करती है।

संयोग से, गणित के इतिहास में एक पेशेवर गणितज्ञ की रुचि के कई कारणों में से एक कारण यह आशा है कि वह छिपे हुए विचारों को प्रकट कर सकता है, जो आगे के अनुसन्धान के लिए उपयोगी हो सकते हैं। इस प्रकार इतिहास का उद्देश्य 'प्रेरणा देना और खोज के कार्य को बढ़ावा देना है' न कि केवल 'सौन्दर्यपरक आनन्द' देना।

यह पुस्तक मुख्य रूप से भारत में गणितीय परम्परा के तीन कालखण्डों से सम्बन्धित है : (1) लगभग 1200 ईसा पूर्व शुरू होने वाला प्राचीन काल, (2) पाँचवीं से बारहवीं शताब्दी तक फैला 'स्वर्ण युग' और (3) गणित के केरल स्कूल का दौर अर्थात, चौदहवीं से सोलहवीं शताब्दी का समय। (यह पुस्तक इस तीसरे चरण को नीला स्कूल के रूप में प्रस्तुत करती है।)

प्राचीन काल

संख्याओं की दशमलव गणना प्रणाली के सिद्धान्तों की शुरुआत इसी अवधि में हुई। इस प्रणाली को एक सहस्राब्दी से अधिक समय में सिद्ध किया गया था और संख्याओं को दर्शाने के लिए दशमलव स्थानीय मान प्रणाली के अर्थात 'शून्य सहित दस प्रतीकों (0, 1, 2, ..., 9) के एक समूह के रूप में हर सम्भव प्राकृतिक संख्या को व्यक्त करने की वह शानदार विधि, जिसमें प्रत्येक प्रतीक का एक स्थानीय मान होता है- के रूप में विकसित किया गया था।' भारत और यूरोप में गणित के विकास के साथ-साथ व्यापार में इसकी उपयोगिता को देखते हुए इस सरल से दिखने वाले आविष्कार के प्रभाव को कमतर नहीं आँका जा सकता है। न्यूटन ने 'संख्याओं के इस नए सिद्धान्त' के अनुरूप घात श्रेणी (power series) और विशेष रूप से एक चर वाले बहुपद को परिभाषित किया और यह देखा कि एक चर वाले इन बीजगणितीय व्यंजकों पर उसी तरह से संक्रियाएँ (जोड़, गुणा...) लागू की जा सकती हैं, जैसे 'सामान्य संख्याओं' पर की जाती हैं।

इस अवधि के गणितीय ज्ञान का मुख्य स्रोत *शुल्बसूत्र* (डोरी के नियम) है, जो अनुष्ठान वेदियों के निर्माण के लिए एक नियमावली है। समीक्षाधीन पुस्तक में *शुल्बसूत्र* की विषयवस्तु का विस्तृत विश्लेषण है। *शुल्बसूत्र*, समतल ज्यामिति के तत्वों के साथ-साथ विकर्ण के प्रमेय (यानी कि 'पाइथागोरस प्रमेय') और सरल रेखीय (Rectilinear) आकृतियों तथा आकृतियों के क्षेत्रफलों के बीच दिए गए सम्बन्धों के साथ उन्हें एक-दूसरे में रूपान्तरित करने के बारे में चर्चा करती है। यह एक ऐसे वृत्त की त्रिज्या के लिए एक अच्छा सन्निकटन मान खोजने के लिए एक ज्यामितीय विधि का वर्णन करती है, जिसका क्षेत्रफल किसी दिए गए वर्ग के बराबर है (और इसकी विपरीत रचना के लिए भी)।

2 के वर्गमूल और π जैसी संख्याओं पर भी विचार किया गया था, लेकिन ऐसा लगता है कि परिमेय और अपरिमेय संख्याओं के बीच के अन्तर को नहीं समझा गया था। लेखक की टिप्पणी के अनुसार, भारतीय गणित ने पूरे इतिहास के दौरान कभी भी भिन्नों के दशमलव निरूपण को नहीं अपनाया। यह अवधारणा कि शून्य भी अपने आप में एक संख्या है, ठीक उसी तरह जैसे कि अन्य कोई भी संख्या (और गणना की दशमलव प्रणाली में शून्य केवल एक प्लेसहोल्डर या स्थानधारक नहीं है) और गणनाओं के लिए इसका परिचय गणित में भारत के सबसे मौलिक योगदानों में गिना जाता है। इस विषय पर पुस्तक के खण्ड 5.3, 'इन्फिनिटी एण्ड जीरो' में संक्षेप में चर्चा की गई है।

स्वर्ण युग

दूसरी अवधि, जिसे कभी-कभी भारतीय गणित का स्वर्ण युग कहा जाता था, पाँचवीं से बारहवीं शताब्दी तक चली और इसमें आर्यभट्ट, ब्रह्मगुप्त और भास्कर द्वितीय के नामों का प्रभुत्व रहा। इस अवधि के दौरान अधिकांश गणित खगोल विज्ञान (खगोलीय वस्तुओं की गति का अध्ययन) से निकटता से सम्बन्धित था। इस अवधि का एक महान योगदान आर्यभट्ट द्वारा समतल त्रिकोणमिति (plane trigonometry) का विकास था। उन्होंने ज्या फलन (sine function) को परिभाषित किया और ज्या फलन के लिए अन्तर समीकरण (difference equation) प्रतिपादित किया। आर्यभट्ट का यह काम बहुत प्रभावशाली था और केरल स्कूल ऑफ़ मैथेमेटिक्स के काम में इसका प्रमुख योगदान था। केरल स्कूल के काम के बारे में बाद में चर्चा की जाएगी।

एक विषय जिसके लिए इन तीनों गणितज्ञों ने आधारभूत योगदान दिया, वह है अनिर्णीत समीकरण (indeterminate equations इसे डायोफैंटाइन समीकरण भी कहा जाता है) का अध्ययन। यहाँ ऐसे बहुपद समीकरण, जिनके गुणांक पूर्णांक हैं, के पूर्णांक हल (न कि केवल परिमेय हल) खोजे जाते हैं।

(हम इस प्रकार के बहुपद समीकरणों के निकायों का भी अध्ययन कर सकते हैं। यह एक कठिन समस्या है, जिसमें वर्तमान में लोगों की बहुत दिलचस्पी है। समीकरण $x^n + y^n = z^n$! के पूर्णांक हलों से सम्बन्धित फर्मा के 'अन्तिम प्रमेय' के बारे में सोचें) पहली और दूसरी घात के अनिर्णीत समीकरणों का इस अवधि के दौरान अध्ययन किया गया और इस कार्य को भारत से उच्च दर्जे के गणितीय योगदान के रूप में बहुत प्रशंसा मिली।

$ax + by = c$ प्रकार के रैखिक डायोफैंटाइन समीकरण, जहाँ a, b, c पूर्णांक हैं और x व y निर्धारित किए जाने वाले पूर्णांक हैं, को वास्तव में यूक्लिडियन एल्गोरिद्म के विस्तार द्वारा हल किया गया था। ऐसी समस्याएँ खगोल विज्ञान से उत्पन्न हुई थीं।

द्विघातीय डायोफैंटाइन समीकरण $Nx^2 + 1 = y^2$, जिसमें N एक धनात्मक पूर्णांक है, को हल करना अधिक कठिन काम था। इस समीकरण पर ब्रह्मगुप्त द्वारा विचार किया गया था। (सदियों बाद इस समीकरण को एक ग़लतफ़हमी के परिणामस्वरूप ऑयलर द्वारा पेल के समीकरण का नाम दिया गया। पेल इस समीकरण को पहचानने वाले पहले व्यक्ति नहीं थे, न ही उन्होंने इसके लिए कोई हल खोजा था।)

इस समस्या से निपटने के लिए ब्रह्मगुप्त ने अधिक सामान्य समस्या $Nx^2 + C = y^2$ पर विचार किया, जहाँ पूर्णांक C को सहायक मानक के रूप में माना गया। उन्होंने दिखाया कि यदि (x, y, C) समीकरण $Nx^2 + C = y^2$ का एक हल है और (x', y', C') समीकरण $Nx'^2 + C' = y'^2$ का हल है, तब $Nx^2 + CC' = y^2$ का स्पष्ट हल लिखा जा सकता है।

(इस प्रकार उन्होंने C के सभी मानों के लिए सभी हलों (x, y, C) के समुच्चय को S माना और S पर एक द्विआधारी संक्रिया (binary operation) को परिभाषित किया। इस प्रकार

उन्होंने सभी हलों के समुच्चय पर एक ढाँचे को परिभाषित किया। इस मामले में यह ढाँचा एक बीजीय संरचना है, जो कि सोचने का एक बहुत ही आधुनिक तरीक़ा है। इस संक्रिया को *भावना* कहा गया।) इस संक्रिया का उपयोग करते हुए उन्होंने कुछ मामलों में पेल के समीकरण के लिए हल प्राप्त किए। हालाँकि वह सामान्य रूप से समीकरण को हल नहीं कर सके थे (जो कि लैग्रांज द्वारा सदियों बाद किया गया था, जब पूर्णांक N एक पूर्ण वर्ग नहीं है), लेकिन उन्होंने पाया कि वह समीकरण को हल कर सकते हैं बशर्ते कि कोई किसी एक समीकरण को हल कर सके
$Nx^2 + C = y^2$,
जहाँ $C = -1, 2, -2, 4, -4$

भास्कर की प्रसिद्ध पुस्तक *लीलावती* गणितज्ञों की कई पीढ़ियों के लिए अंकगणित और ज्यामिति का अध्ययन करने के लिए एक बुनियादी पाठ्यपुस्तक के रूप में कार्य कर रही है। ऐसा प्रतीत होता है कि भास्कर ने अपनी बेटी को गणित पढ़ाने के लिए यह पुस्तक लिखी थी, यह उस समय का एक प्रगतिशील और प्रेरणादायी कार्य है जब ज्ञान मुख्य रूप से पिता द्वारा पुत्र को दिया जाता था।

उनकी पुस्तक *बीजगणित* में एक कलन-विधि (algorithm) भी शामिल है (जयदेव के कारण), जो पेल के समीकरण का हल खोजने के लिए है और जिसे *चक्रवाल* या चक्रीय विधि कहा जाता है। $Nx^2 + C = y^2$ के ज्ञात हल से शुरू करके, यह $Nx^2 + C = y^2$ का हल खोजने के लिए एक कलन-विधि स्थापित करता है, जहाँ $C = -1, 2, -2, 4, -4$ है। यहाँ से हम उपरोक्त का हवाला देते हुए ब्रह्मगुप्त के परिणाम के ज़रिए पेल के समीकरण का एक हल पा सकते हैं। हालाँकि ऐसा लगता है कि यह उन्नीसवीं सदी में ही साबित हो गया था कि इस कलन-विधि से वांछित परिणाम प्राप्त होता है।

यह कार्य अभी भी रुचिकर है, क्योंकि पेल का समीकरण द्विघातीय संख्या क्षेत्रों और द्विआधारी द्विघात रूपों से सम्बन्धित है। *भावना* एक द्विघातीय संख्या क्षेत्र में एक स्तर (standard) के गुणनात्मक गुणधर्म की अभिव्यक्ति है और पेल के समीकरण के हल एक वास्तविक द्विघात क्षेत्र में उत्पन्न 'इकाइयाँ' हैं।

ब्रह्मगुप्त के पास ऋणात्मक संख्याओं के साथ काम करने की व्यवस्था थी और उन्होंने चिह्नों के गुणन के लिए नियम बताया। यह कार्य उल्लेखनीय है क्योंकि ऋणात्मक संख्याओं को स्वीकार किए जाने में कई और शताब्दियों का समय लगा। ब्रह्मगुप्त ने चक्रीय चतुर्भुजों अर्थात, एक वृत्त के अन्दर बने चतुर्भुजों पर कुछ बढ़िया परिणाम प्राप्त किए थे।

जबकि इस अवधि के दौरान गणित का अधिकांश भाग खगोल विज्ञान द्वारा संचालित था, द्विघात डायोफैंटाइन समीकरणों और चक्रीय चतुर्भुजों के उदाहरण बताते हैं कि गणित का विकास स्वयं के लिए भी किया गया।

लेखक आर्यभट्ट की पुस्तक *आर्यभटीय* की सामग्री का विस्तृत विवरण देते हैं, विशेष रूप से *गणितपाद* भाग का। चूँकि *आर्यभटीय* को पढ़ना मुश्किल है, इसलिए लेखक पाठ्यवस्तु पर टिप्पणियों का इस्तेमाल करते हैं, ख़ासतौर पर नीलकण्ठ द्वारा की गई टिप्पणियों का। रैखिक डायोफैंटाइन समीकरण को हल करने का 'कुट्टाका' तरीक़ा बताया गया है। 'त्रिकोणमिति के आविष्कार' के लिए ज़रूरी विचारों को खण्ड 7.3 और 7.4 में समझाया गया है।

द्विघात डायोफैंटाइन समस्या की स्पष्ट व्याख्या, *भावना* और *चक्रवाल* के लिए आप खण्ड 8.2 और 8.3 देख सकते हैं।

द केरल (या नीला) स्कूल ऑफ़ मैथेमेटिक्स

कुछ समय के लिए यह माना जाता था कि बारहवीं शताब्दी में ऐतिहासिक भारत में गणितीय गतिविधि और रचनात्मकता बन्द हो गई थी। वास्तव में, चौदहवीं से सोलहवीं शताब्दी के दौरान केरल में गणितीय गतिविधि का विस्फोट हुआ और इससे जो गणित उपजा वह यक़ीनन भारतीय गणित का सबसे बेहतरीन था। केरल में नीला नदी के तट पर रहने वाले कुछ गणितज्ञों ने अपना एक समूह बनाया, जिसे अब केरल स्कूल ऑफ़ मैथेमेटिक्स के रूप में जाना जाता है। (लेखक केरल के एक पुराने स्कूल से अलग करने के लिए इसे नीला स्कूल कहना पसन्द करते हैं, अध्याय 9 देखें।) स्कूल के संस्थापक माधव थे। उन्होंने और उनके स्कूल ने ज्या, कोज्या और प्रतिलोम स्पर्शज्या (arctangent) फलनों के लिए घात श्रेणी के विस्तार की खोज की और त्रिकोणमितीय फलनों, बहुपदों और परिमेय फलनों के लिए सूक्ष्म या अतिसूक्ष्म कलन (infinitesimal calculus) विकसित किया। विशेष रूप से प्रसिद्ध सूत्र

$$\pi/4 = 1 - 1/3 + 1/5 - \ldots\ldots,$$

जो ग्रेगरी और लैबनीज द्वारा सदियों बाद पाया गया था, केरल स्कूल के लिए जाना जाता था। इस श्रेणी को अब माधव-ग्रेगरी श्रेणी के नाम से जाना जाता है। माधव की तुलना न्यूटन और लैबनीज के साथ की गई है, जो यूरोप में कलन के खोजकर्ता हैं।

स्कूल के अग्रणी कार्य का प्राथमिक स्रोत ज्येष्ठदेव द्वारा लिखी *युक्तिभाषा* है। यह किताब मलयालम में लिखी गई है, न कि संस्कृत में जिसमें विद्वानों द्वारा किताबें लिखी जाती थीं। दिवाकरन, जो मलयालम पढ़ सकते हैं, पुस्तक के बारे में कहते हैं : इसमें अभिप्रेरणा, अवधारणात्मक, प्रेरणाएँ, तकनीकी प्रगति (प्रमाण सहित) आदि सावधानीपूर्वक और परिष्कृत

तरीक़े के साथ सुस्पष्ट मलयालम गद्य में दिए गए हैं, जो कि पहले के आचार्यों के गूढ़ सूत्रों से बहुत अलग हैं।

दिवाकरन ने स्कूल के बारे में अध्ययन और शोध करने में कई साल लगाए हैं। वे स्कूल के सदस्यों, उनके काम और उनकी सामाजिक पृष्ठभूमि के बारे में पूरे जोश के साथ और आधिकारिक रूप लिखते हैं। पुस्तक का पूरा तीसरा भाग नीला स्कूल के काम के विस्तृत और व्यापक विवरण के लिए समर्पित है तथा इस भाग में आवश्यकतानुसार आधुनिक गणितीय भाषा का उपयोग भी किया गया है।

दिवाकरन ने भारतीय गणित पर पुनरावृत्ति (recursion) के विचार के निरन्तर प्रभावों का अध्ययन किया है और उनका मानना है कि यह *भारतीय गणित* की प्रमुख विशेषताओं में से एक है। कहीं और डेविड मुमफोर्ड ने कहा है कि '*युक्तिभाषा* भारतीय विधियों की दिशा में एक अद्‌वितीय अन्तर्दृष्टि देती है : यह पुनरावृत्ति (recursion), आगमन (induction) और सीमा (limit) तक के लिए एक बहुत सावधानी से तैयार किया गया एक मार्ग है।' यह तीनों केरल स्कूल के गणित में एक साथ आते हैं।

उदाहरण के लिए, ज्या फलन के लिए कलन को ज्या फलन के लिए अन्तर समीकरण के आर्यभट्ट के परिणाम के साथ शुरू करके और फिर सावधानीपूर्वक सीमा तक बढ़ाकर विकसित किया गया है। डी'एलेबर्ट के कथन से इसका अनुमान लगाया जा सकता है : "सूक्ष्म या अतिसूक्ष्म कलन की वास्तविक तत्वमीमांसा (metaphysics) सीमा की धारणा के अलावा और कुछ नहीं है।"

इस स्कूल के काम को मान्यता प्राप्त करने में दो शताब्दियों से अधिक समय लगा। जैसा कि लेखक का कहना है "आधुनिक विद्‌वानों को इस शानदार उपलब्धि और इसकी मौलिकता को आत्मसात करने में काफ़ी समय लगा– वे आरम्भ में तुलनात्मक रूप से अनभिज्ञ रहे, फिर कुछ समझ बनी तो वे विस्मित हुए और फिर जानकारीयुक्त विवेचना करने पर इस आविष्कार की भूरि-भूरि प्रशंसा कर उठे।"

न्यूटन और लैबनीज द्‌वारा कलन की खोज के तुरन्त बाद यूरोप में कलन और प्राकृतिक विज्ञान के लिए इसके अनुप्रयोगों का विस्फोट हुआ, जो ऑयलर, लैग्रांज, लाप्लास, कोशी और अन्य महान गणितज्ञों द्‌वारा प्रेरित था। दूसरी ओर, केरल स्कूल के काम की भारत (और अन्य जगहों) में शायद ही कोई गूँज थी। वास्तव में, आधुनिक काल तक भारत में एक रचनात्मक गतिविधि के रूप में गणित का अस्तित्व समाप्त हो गया था।

एक ओर जहाँ इसकी पुनर्खोज का श्रेय भारतीय गणितज्ञों को जाता है, जिनमें से के. बालागंगाधरन और सी.टी. राजगोपाल ने इस काम का अध्ययन किया और आधुनिक भाषा

में कार्य का विवरण लिखा (शुरुआत 1940 के दशक से की)। जिसने अन्तर्राष्ट्रीय गणितीय समुदाय का ध्यान इस काम की ओर खींचा। वहीं दूसरी ओर (लगभग उसी समय) *युक्तिभाषा* का एक समालोचनात्मक संस्करण विद्वानों द्वारा प्रकाशित किया गया था। भारत में 'केरल स्कूल' के नाम से अब आम जनता परिचित है। क्या यह हो सकता है कि स्कूल के उल्लेखनीय योगदान की मान्यता में लम्बे समय तक देरी संस्कृत के आधिपत्य के कारण थी, क्योंकि *युक्तिभाषा* स्थानीय भाषा मलयालम में लिखी गई थी?

उपसंहार

'कनेक्शंस' शीर्षक वाला अन्तिम भाग कई बातों के बारे में बताता है, जो गणित के विकास के पाठ्यक्रम और समाजशास्त्र की उचित प्रशंसा के लिए प्रासंगिक हैं और इसे संक्षेप में प्रस्तुत करना आसान नहीं है। यह प्राथमिकताओं, मौलिकता, विचारों के संचरण और भारतीय गणित में प्रमाण की भूमिका जैसे जटिल सवालों से निपटने से बचता नहीं है। यह ऐसे प्रश्न हैं जो गणित के इतिहासकारों (और गणितज्ञों) के बीच बहुत उत्साह पैदा करते हैं; उदाहरण के लिए, कुछ यूरो-केन्द्रित गणितज्ञ भारतीय गणित को नीचा दिखाएँगे, वहीं कुछ भारतीय गणितज्ञ भारतीय योगदान को बढ़ा-चढ़ाकर प्रस्तुत करेंगे। लेखक विभिन्न दृष्टिकोणों का विश्लेषण करते हैं और अपने स्वयं के निष्कर्ष प्रस्तुत करते हैं जो तर्कसंगत और ग़ैर-हठधर्मी हैं।

वह व्यक्तिगत गणितज्ञों में विश्वास की भूमिका पर भी चर्चा करते हैं। ऐसा माना जाता है कि माधव के कुछ उत्तराधिकारी और उनके जैविक वंशज लोकायत दर्शन का पालन करते थे, लेकिन माधव के बारे में यह जानने के लिए हमारे पास पर्याप्त जानकारी नहीं है कि क्या उन्होंने भी ऐसा किया था।

ज्ञान के प्रसारण के सम्बन्ध में, यह तथ्य चौंकाने वाला है कि जबकि भारतीय गणितज्ञ ग्रीक खगोल विज्ञान के प्रति ग्रहणशील थे, तो भी यूक्लिड के 'तत्वों' का कोई प्रभाव नहीं था। साथ ही अन्य तथ्यों जैसे कि अभाज्य संख्याओं, अभाज्य गुणनखण्ड ('अंकगणित की आधारभूत प्रमेय'), यूक्लिड की किताब *एलिमेंट्स* में दिए गए असम्मेय (incommensurables) के वर्णन और स्वयंसिद्ध (axiomatic) व निगमनात्मक (deductive) विधियों से परिचय का कोई निशान भारतीय गणित में नहीं मिलता। अन्य बौद्धिक गतिविधियाँ जो गणित के लिए प्रासंगिक हो सकती थीं, उनका भी भारत में कोई प्रभाव नहीं पड़ा। लेखक कहते हैं : 'यह सोचना निरर्थक लेकिन फिर भी आकर्षक है कि कैसे पाणिनी की संरचनात्मक विधियों को पूरी तरह अपनाने से भारत का गणितीय परिदृश्य बदल सकता था।'

जहाँ तक भारत से ज्ञान के प्रसार की बात है तो भारतीय गणित, विशेष रूप से बीजगणित का, अरब लोगों (एक व्यापक शब्द जिसमें वर्तमान ईरान, मध्य एशिया और कुछ अरबी भाषी देशों के निवासी शामिल थे) द्वारा अध्ययन और विकास किया गया था और उनके

द्वारा यूरोप में प्रेषित किया गया था। सोलहवीं शताब्दी में इटली में बीजगणित का विकास, भारत और इस्लामी देशों में उत्पन्न होने वाले गणित से प्रभावित था। इससे आधुनिक गणित और यूरोप में गणित के पुनर्जागरण की शुरुआत हुई।

दशमलव स्थानीय मान प्रणाली का ज्ञान भी अरबों द्वारा यूरोप में प्रेषित किया गया था।

विवरण

इस पुस्तक में विवरण को चर्चा के अनुकूल बनाया गया है। कम गणितीय पृष्ठभूमि वाले लोगों को एक स्वाभाविक परिचय मिल सकता है कि प्राकृतिक संख्याएँ (पेआनो स्वयंसिद्ध) क्या हैं और पुनरावृत्ति और आगमन का क्या मतलब है। वे गणना की दशमलव प्रणाली (खण्ड 4.2) के बारे में भी जान सकते हैं। जो लोग थोड़ी बहुत गणितीय पृष्ठभूमि वाले हैं, वे आधुनिक संकेतन और गणितीय भाषा में पढ़ने का आनन्द ले सकते हैं कि ज्या फलन के लिए घात श्रेणी का विस्तार केरल स्कूल (खण्ड 12.2) द्वारा कैसे किया गया। यहाँ तक कि गणित या गणित के इतिहास में कोई दिलचस्पी नहीं रखने वाला व्यक्ति भी इतिहास की एक निश्चित अवधि में केरल के एक आकर्षक सामाजिक इतिहास को ख़ुशी के साथ पढ़ सकता है (खण्ड 9.2 और 9.3 में)।

मैंने पुस्तक में वर्णित किए गए अन्य विषयों को छोड़ दिया है, जैसे कि सिन्धु घाटी सभ्यता में गणित, यूनानी खगोल विज्ञान का प्रभाव, जैन और बौद्ध गणित और बख्शाली पाण्डुलिपि।

भारत के गणित के इतिहास को गहराई से समझने में रुचि रखने वाले किसी भी व्यक्ति को निश्चित तौर पर यह पुस्तक पढ़नी चाहिए। हालाँकि कुछ भागों में पाठ्यवस्तु कुछ हद तक सघन है, फिर भी इन भागों को ध्यान से पढ़ना एक आनन्ददायी अनुभव होगा।

.....

प्रोफ़ेसर एम. एस. नरसिम्हन, (फेलो ऑफ़ रॉयल सोसाइटी) वर्तमान में गणित विभाग, भारतीय विज्ञान संस्थान और बेंगलूरु में टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ़ फंडामेंटल रिसर्च के सेंटर फॉर एप्लीकेबल मैथेमेटिक्स से जुड़े हैं। वह टीआईएफआर, मुम्बई में प्रोफ़ेसर रहे हैं। वह टीआईएफआर के मानद फैलो हैं। 1992 में, वह ट्राइस्टे में इंटरनेशनल सेंटर फॉर थियोरेटिकल फिजिक्स में गए, जहाँ उन्होंने गणित में अनुसन्धान समूह का नेतृत्व किया। उन्हें 1975 में भटनागर पुरस्कार और 1987 में गणित के लिए थर्ड वर्ल्ड एकैडमी अवार्ड से सम्मानित किया गया। 2006 में उन्हें विज्ञान के लिए किंग फ़ैसल इंटरनेशनल पुरस्कार से नवाज़ा गया। प्रोफ़ेसर नरसिम्हन को गणित के इतिहास में गहरी दिलचस्पी है। उनसे narasim@math.tifrbng.res.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : निदेश सोनी
पुनरीक्षण : संदीप दिवाकर और हृदय कान्त दीवान
कॉपी-एडीटिंग : कविता तिवारी
सम्पादन : राजेश उत्साही